15,17 नवम्बर 2006
जिनवाणी, 130

तपागच्छीय प्रतिक्रमण में प्रमुख तीन सूत्र-स्तवन

श्री छगनलाल जैन

श्वेताम्बर जैन मूर्तिपूजकों की तपागच्छ परम्परा के प्रचलित प्रतिक्रमण में वन्दित्तु सूत्र प्रमुख है जो देवसिय, राइय, पक्खिय, चउम्मासिय एवं संवच्छरिय - सभी प्रतिक्रमणों में बोला जाता है, क्योंकि इस पाठ से १२ व्रतों के अतिचारों की आलोचना होती है। सकलार्हत् एवं अजितशान्तिस्तवन पक्खिय, चउम्मासिय एवं संवच्छरिय प्रतिक्रमणों में बोले जाते हैं। -*सम्पादक*

श्वेताम्बर मूर्तिपूजक तपागच्छ परम्परा के वर्तमान में प्रचलित प्रतिक्रमण में तीन पाठ प्रमुख हैं- १. वंदित्तु सूत्र २. सकलार्हत् स्तवन ३. अजितशान्ति स्तवन। यहाँ पर इन तीनों पर प्रकाश डाला जा रहा है।

वंदित्तु सूत्र

वंदित्तु सूत्र को श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र भी कहा जाता है। यह पद्यमय है तथा 'वंदित्तु' शब्द से प्रारम्भ होने के कारण इसका नाम 'वंदित्तु' सूत्र है। इसमें कुल पचास गाथाएँ हैं। श्रावकों के बारह व्रतों एवं अतिचारों से यह सूत्र सम्बन्धित है। बारह व्रत इस प्रकार हैं- **पाँच अणुव्रत**-अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। **तीन गुणव्रत**- दिशा परिमाण व्रत, उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत, अनर्थदण्ड व्रत; एवं **चार शिक्षाव्रत**- सामायिक व्रत, देशावकाशिक व्रत, पौषधोपवास व्रत एवं अतिथिसंविभाग व्रत। दिन में, रात्रि में, एक पखवाड़े में, चार माह में अथवा वर्षभर में इन व्रतों के पालन में जो दोष लगे हैं, उनका हृदय से पश्चात्ताप करना ही प्रतिक्रमण है। इन व्रतों एवं अतिचारों के संबंध में अगार धर्म में, तत्त्वार्थ सूत्र सप्तम अध्याय एवं इस 'वंदित्तु सूत्र' की गाथाओं में विस्तार से वर्णन है। जो अतिचार सामान्यतः कम जानकारी में आते हैं संक्षेप में मात्र उनका वर्णन यहाँ पुनरावृत्ति दोष से बचने हेतु किया जा रहा है। साथ ही सूत्र में सम्यग्दर्शन के दोषों का का भी उल्लेख प्राप्त है, जिनकी सभी प्रतिक्रमणों में आलोयणा की जाती है।

संका कंखा, विगिच्छा, पसंस तह संथवो कुलिंगीसु।
सम्मत्तस्सइयारे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ।। -वंदित्तु सूत्र, गाथा ६

जिनवचन में शंका, धर्म के फल की आकांक्षा, साधु-साध्वी के मलिन वस्त्रों पर घृणा, मिथ्यात्वियों की प्रशंसा, उनकी स्तवना सम्यग्दर्शन के पाँच अतिचार हैं। इसी तरह पृथ्वीकायिकादि जीवों के समारंभ से प्राणियों को बाँधने से, नाक, कानादि छेदने से, किसी का रहस्य खोलने से, कूट तोल-माप रखने, झूठा दस्तावेज लिखने, चोरी की वस्तु रखने, नकली वस्तु असली के दाम में बेचने, परस्त्रीगमन, अपरिग्रह व्रत में हेर-फेर करने, अनर्थदण्ड के कार्य, व्यर्थ प्रलाप, अनावश्यक वस्तु-संग्रह, स्वाद की गुलामी, पाप कार्य में साक्षी, सामायिक में समभाव नहीं, समय मर्यादा नहीं पालना, नींद लेना, दिग्व्रत का उचित पालन नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करना, शस्त्रादि व्यापार, चक्की घाणी यांत्रिक कर्म जिनमें जीवों की हानि हो, छेदन, अग्नि कर्म आदि तथा भूमि प्रमार्जन में प्रमाद, पौषधव्रत का उल्लंघन, इस लोक में परलोक में सुख-वैभव की आकांक्षा आदि विविध दोषों के लिए वंदित्तु सूत्र में आलोचना की गई है। कुछ ऐसे दोहे हैं जिनमें स्व-आलोचना का महत्त्व दर्शाया है, जैसे- ''कयपावोवि मणुस्सो आलोइअ निंदिअ गुरुसगासे।'' जिस प्रकार भार उतारने से व्यक्ति हल्का होता है उसी प्रकार गुरुदेव के पास आलोयणा लेने से, आत्मसाक्षी से, पाप की निन्दा करने से मनुष्य के पाप हल्के होते हैं। 'खिप्पं उवसामेई वाहिव्व सुसिक्खिओ विज्जो।' सुशिक्षित वैद्य जैसे रोग को ठीक कर देता है वैसे ही प्रतिक्रमण से दोष दूर हो जाते हैं।

प्रतिक्रमण में निषिद्ध कार्य करने एवं योग्य कार्य न करने के दोषों के लिए प्रायश्चित्त एवं आत्म-निन्दा की जाती है। फिर सब जीवों से क्षमायाचना की जाती है -''खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे। मित्ती मे सव्वभूएसु वेरं मज्झं न केणई।'' वंदित्तुसूत्र की ५०वीं गाथा में ''एवमहं आलोइअ निंदिअ गरहिअ दुगच्छं सम्मं''कहा है अर्थात् मैं अच्छी तरह कृत पापों की आलोचना, निन्दा एवं गुरु के समक्ष गर्हा करता हूँ।

सकलार्हत् सूत्र- वंदित्तु के अनन्तर सकलार्हत् चैत्य वन्दन का संक्षिप्त वर्णन किया जाता है। चैत्यवंदन में चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति है एवं चैत्यों, तीर्थों, प्रतिमाओं को भी कुछ श्लोक समर्पित हैं। संस्कृत में रचित ये श्लोक प्रभावी, गूढ़ और अध्यात्म शास्त्र के बेजोड़ नमूने हैं।

स्थानाभाव से कुछ ही पद्य उल्लेखित करना उपयुक्त होगा। अतः जिज्ञासु मूल पाठ सहृदयता से पढ़ें एवं समझें-

प्रथम तीर्थंकर दादा ऋषभदेव के लिए अर्पित है-

आदिमं पृथ्वीनाथमादिमं निष्परिग्रहम्।
आदिमं तीर्थनाथं च ऋषभस्वामिनं स्तुमः॥

अवसर्पिणी काल में ऋषभ देव प्रथम नृपति, प्रथम अपरिग्रही एवं प्रथम तीर्थंकर हुए हैं, जिन्हें वन्दन करते हैं।

अनेकान्तमताम्बोधि समुल्लासनचन्द्रमाः।
दद्यादमन्दमानंदं भगवान् अभिनन्दनः॥

अनेकान्त रूपी समुद्र को उल्लासित करने में अभिनन्दन स्वामी चन्द्रमा के समान हैं।

सत्त्वानां परमानन्दकंदोद्भेदनवाम्बुदः।
स्याद्वादमृतनिःस्यन्दी, शीतलः पातु वो जिनः॥

स्याद्वाद रूपी अमृत की वर्षा करने वाले, परमानन्द रूपी अंकुर को स्थापन करने में नव मेघ तुल्य प्रभु शीतलनाथ को वंदन करता हूँ।

इसी प्रकार कहा है कि भवरूपी रोग को मिटाने में कुशल वैद्य समान श्रेयांस नाथ आपका श्रेय करे। अनंतनाथ प्रभु के हृदय में स्वयम्भूरमण समुद्र की अनंत करुणा है। धर्मनाथ प्रभु कल्पवृक्ष के समान हैं। शांतिनाथ प्रभु अमृत के समान निर्मल देशना से दिशाओं के मुख उज्ज्वल करते हैं। श्री कुंथुनाथ प्रभु चौबीस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतिशय युक्त हैं, सुर-असुर, नरों से सेवित हैं।

सूरासुरनराधीशं मयूरनववादिदम्।
कर्मद्रून्मूलने हस्तिमल्लं मल्लिमभिष्टुमः ।।

मल्लीनाथ प्रभु कर्मवृक्षों को उखाड़ फेंकने में हस्तिसम हैं। सबके मन-मयूर को हर्षित करने में नव मेघ समान हैं।

वीरप्रभु हेतु कई पद हैं- वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिताः।
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो वीराय नित्यं नमः ।।

वीरप्रभु विद्वानों, पंडितों से पूजित हैं सारे कर्म घोर तप से नष्ट किये हैं। उनमें केवलज्ञान रूपी लक्ष्मी, धैर्य, कांति, कीर्ति स्थित है। तीर्थों की उपासना में अष्टापद, गजपद, सम्मेतशिखर, गिरनार, शत्रुंजय, वैभारगिरि, आबू, चित्रकूट की उपासना की है।

अजित शांतिस्तवन

सकलार्हत् की तरह अजितशांति स्तवन भी पाक्षिक, चातुर्मासिक एवं सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में बोला जाता है। इसमें चालीस पद्य हैं जो पूर्वाचार्य श्री नंदिषेण कृत हैं। शत्रुंजय एवं तीर्थ पर विराजित अजितनाथ एवं शांतिनाथ के चैत्यों के बीच में रहकर दोनों की एक साथ स्तुति कर रचना की है। कोई आचार्य, श्री नंदिषेण को भगवान् महावीर के शिष्य तथा कोई नेमिनाथ प्रभु के शिष्य मानते हैं। शत्रुंजय महाकल्प में नंदिषेण का उल्लेख है। प्राकृत भाषा में शांतरस, सौन्दर्य एवं शृंगार रस एवं श्रेष्ठ कवित्व का अध्यात्म जगत में बेजोड़ नमूना है। रुचि अनुसार पाठक विस्तार से मूल अवश्य पढ़ें यहाँ चंद पद्य उपर्युक्त भाव की पुष्टि स्वरूप दिये जाते हैं-

अजिअं जिअ-सव्वभयं, संतिं च पसंत सव्वगय पावं।
जय गुरु संति गुणकरे, दो वि जिणवरे पणिवयामि ।।

अजितनाथ एवं शांतिनाथ दोनों जिनवर सब पापों को हर कर शांति देने वाले हैं। सातों भयों को दूर करते हैं।

सुहप्पवत्तणं तव पुरिसुत्तम नाम कित्तणं।
तहय धिइमइप्पवत्तणं तव य जिणुत्तम संति कित्तणं ।।

अजितनाथ सुख के दाता, धैर्य एवं बुद्धि की वृद्धि करने वाले हैं।

समस्त अजितशांति में स्थान-स्थान पर शान्ति की कामना की है।

तं संति संतिकरं, संतिण्णं सव्वभया।
संतिं थुणामि जिणं संतिं विहेउ मे ।।

इस प्रकार वंदित्तु सूत्र आत्मशुद्धि हेतु व्रतों की आलोचना से सम्बद्ध है तथा सकलार्हत् स्तोत्र एवं अजितशान्ति स्तवन प्रभु के वंदन एवं स्तुति से सम्बद्ध हैं तथा तीनों ही श्रावकधर्म की पुष्टि करते हैं।

- सेवानिवृत्त, आई.ए.एस., जी १३४, शास्त्री नगर, जोधपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org